

● सुनो, पढ़ो और लिखो :

६. मेरा बचपन

मेरे पिता जी कुटुंबप्रेमी, सत्यप्रिय और बहुत ही उदार थे। वे पोरबंदर के दीवान थे। उनका नाम करमचंद था। वे रिश्वत से दूर भागते थे इसलिए निष्पक्ष न्याय करते थे। वे राज्य के प्रति बड़े वफादार थे। मेरी माँ का नाम पुतलीबाई था। मेरे मन पर यह छाप है कि माता जी साध्वी स्त्री थीं। बड़ी भावुक, पूजा-पाठ के बिना कभी भोजन न करतीं। व्रत-उपवास उनके जीवन के अंग बन गए थे। माता जी व्यवहार कुशल थीं। दरबार की सब बातें जानती थीं। बचपन में माँ मुझे कभी-कभी अपने साथ राजमहल ले जाया करती थीं। ऐसे माता-पिता के यहाँ संवत् १९२५ की भादों बदी द्वादशी के दिन अर्थात् सन १८६९ के अक्तूबर की दूसरी तारीख को पोरबंदर में मेरा जन्म हुआ। बचपन वहीं बीता।

मुझे राजकोट की ग्राम पाठशाला में पढ़ने भेजा गया। तब मेरी उम्र सात बरस की रही होगी। मेरी गिनती शायद साधारण श्रेणी के विद्यार्थियों में रही होगी। सभी शिक्षकों के नाम-धाम मुझे आज भी याद हैं। मैं अपने शिक्षकों का बड़ा आदर करता था। उनके प्रति मेरा आदर कभी घटा नहीं। बड़ों के दोष न देखने का गुण मुझमें स्वाभाविक रूप से था। मैंने समझ रखा था कि बड़ों की आज्ञा का पालन करना चाहिए। जो वे कहें; वह करना चाहिए। जो करें उसका काजी मुझे नहीं बनना चाहिए। इसी समय के दो प्रसंग सदा मुझे याद रहे हैं। पिता जी की खरीदी हुई एक किताब पर मेरी नजर पड़ी। वह 'श्रवण-पितृभक्ति' नामक नाटक था। उसे बड़े चाव से पढ़ गया। उन दिनों बाइस्कोप दिखाने वाले



- प्रथम परिच्छेद का आदर्श वाचन करें। विद्यार्थियों से सामूहिक एवं एकल मुखर वाचन और सामूहिक मौन वाचन कराएँ। पाठ में समाविष्ट प्रसंगों पर प्रश्न पूछें और उनपर चर्चा करें। विद्यार्थियों को उनके बचपन के विशेष अनुभव बताने के लिए प्रेरित करें।

दरवाजे पर फिरा करते थे। उसमें मैंने श्रवण द्वारा अपने माता-पिता को काँवड़ में बिठाकर यात्रा पर ले जाने का चित्र भी देखा। दोनों चीजों का मुझपर गहरा असर पड़ा। मुझे भी श्रवण के समान होना चाहिए, यह भाव मन में उठने लगा। इसी बीच कोई नाटक कंपनी आई। मुझे उसका नाटक देखने की इजाजत मिली। उसमें हरिश्चंद्र की कथा थी। यह नाटक देखने से मेरी तृप्ति नहीं होती थी। हरिश्चंद्र के सपने आया करते। ‘हरिश्चंद्र जैसे सत्यवादी सब क्यों नहीं हो जाते?’ यह धुन लगी रहती। मेरे मन में हरिश्चंद्र और श्रवण आज भी जीवित हैं। मैं इनके आधार पर अपने आचरण पर सदैव ध्यान देने लगा। मुझे याद नहीं है कि मैंने कभी किसी शिक्षक या लड़के से झूठ बोला हो। सत्य पर टिके रहना, बड़ों का आदर करना तथा उनके प्रति सेवाभाव के साथ-ही-साथ दीन-दुखियों के दर्द को अपना समझना; आज भी मेरे जीवन का मूल मंत्र बना हुआ है।

मैंने पढ़ा था कि खुली हवा में घूमना स्वास्थ्य की दृष्टि से उपयोगी होता है। मैंने सैर करने की आदत डाल ली। इससे मेरे शरीर में कसाव आ गया। पढ़ाई में अक्षर अच्छे होने की जरूरत नहीं है, पता नहीं यह गलत विचार मेरे मन में कैसे बैठ गया था। इस भूल की सजा आज भी मेरे मन को मिल रही है। दूसरों के मोती जैसे अक्षर देखकर मैं अपनी लिखावट पर बहुत पछताता हूँ। बाद में मैंने अपनी लिखावट सुधारने का प्रयत्न किया किंतु तब तक बहुत देर हो चुकी थी। बचपन में मुझे खेलों में रुचि नहीं थी। हमारे विद्यालय में

ऊपर की कक्षा के विद्यार्थियों के लिए व्यायाम और क्रिकेट को अनिवार्य कर दिया गया था। मेरा मन इनमें नहीं लगता था। अब मुझे यह लगता है कि खेल और व्यायाम के प्रति मेरी यह अरुचि एक गलती थी। पढ़ने के साथ खेल एवं व्यायाम करना भी बहुत जरूरी है। बाद में समझ में आया कि विद्याभ्यास में व्यायाम अर्थात् शारीरिक शिक्षा को मानसिक शिक्षा के बराबर ही स्थान होना चाहिए।

कुछ गलत मित्रों की सोहबत से मुझे ‘कश’ खींचने का शौक हो गया। पैसा पास न होने के कारण हमने चाचा के पीकर फेंके गए सिगरेट के टुकड़े चुराना शुरू कर दिए। कुछ समय बाद अपनी गलती का अहसास हो गया और सिगरेट पीने की आदत भी जाती रही। बड़े होने पर मुझे कभी सिगरेट पीने की इच्छा ही नहीं हुई। मेरी यह सदैव धारणा रही कि किसी भी नशे की आदत जंगली, गंदी और हानिकारक है। सिगरेट-बीड़ी का इतना जबरदस्त शौक दुनिया में क्यों है, इसे मैं कभी समझ ही नहीं सका। प्रत्येक बाल, युवा, प्रौढ़ को किसी भी नशे से बचना चाहिए।

— मोहनदास करमचंद गांधी



- ❑ विद्यार्थियों से गांधीजी के जीवन के महत्वपूर्ण प्रसंगों के बारे में बताने के लिए कहें। महान विभूतियों की जीवनी पढ़ने हेतु उन्हें प्रेरित करें। पाठ में आए स्थानों, व्यक्तियों, वस्तुओं, अवस्थावाले संज्ञा शब्दों को ढूँढ़ने के लिए कहें। इनके स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्दों पर चर्चा करें। किसी भी लत/नशे से होने वाली हानियों, घातक परिणामों के बारे में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करें।